P: ISSN NO.: 2321-290X RNI : UPBIL/2013/55327 VOL-6* ISSUE-9*(Part-1) May- 2019
E: ISSN NO.: 2349-980X **Shrinkhla Ek Shodhparak Vaicharik Patrika**

भारत में ग्रामीण अर्थव्यवस्था एवं ग्रामीण विकास में चुनौतियाँ एवं संभावनाएँ

नीलम सोनी
असिस्टेन्ट प्रोफेसर,
इतिहास विभाग,
राम सहाय राजकीय महाविद्यालय, बैरी,
शिवराजपुर, कानपुर,
उत्तर प्रदेश, भारत

सारांश

भारत का आर्थिक विकास सिन्धु घाटी की सभ्यता से आरम्भ माना जाता है। सिन्धु घाटी सभ्यता की अर्थव्यवस्था मुख्यतः व्यापार पर आधारित प्रतीत होती है जो यातायात में प्रगति के आधार पर समझी जा सकती है। लगभग 600 ई0पू0 महाजनपदों में विशेष रूप से चिन्हित सिक्को को ढालना आरम्भ कर दिया। इस समय को गहन व्यापारिक गतिविधि एवं नगरीय विकास के रूप में चिन्हित किया जाता है। 300 ई0पू0 से मौर्यकाल ने भारतीय उपमहाद्वीप का एकीकरण किया राजनीतिक एकीकरण और सैन्य सुरक्षा ने कृषि उत्पादकता में वृद्धि के साथ व्यापार एवं वाणिज्य से सामान्य आर्थिक प्रणाली को बढ़ावा मिला। अगले 1500 वर्षों में भारत में राष्ट्रकूट होयसल और पश्चिमी गंग जैसे प्रतिष्ठित सभ्यताओं का विकास हुआ इस अवधि के दौरान भारत को प्राचीन एवं 17 वीं सदी तक के मध्ययुगीन विश्व की सबसे बड़ी अर्थव्यवस्था के रूप में आंकलित किया जाता है। इसमें विश्व की कुल सम्पत्ति का एक तिहाई से एक चौथाई भाग मराठा साम्राज्य के पास था। इसमें यूरोपीय उपनिवेशवाद के दौरान तेजी से गिरावट आयी। आर्थिक इतिहासकार अंगस मेडीसन की एक पुस्तक (द वर्ल्ड इकॉनामी ए मिलेनियम पर्स्पेक्टिव) के अनुसार भारत विश्व का सबसे धनी देश था और 17 वी सदी तक दुनिया की सबसे बड़ी अर्थव्यवस्था था।

अतिप्राचीन काल से भारत के आर्थिक जीवन का आधार 'वार्ता' को स्वीकार किया गया है। 'वार्ता' के अन्तर्गत कृषि, पशुपालन तथा वाणिज्य की गणना की गयी है। अर्थशास्त्र में इसका महत्व इस प्रकार स्वीकार किया गया है–वार्ता से तात्पर्य कृषि, पशुपालन तथा वाणिज्य से है। धान्य, पशुः स्वर्ण, कुप्य तथा विष्टि जैसे वार्ता के साधन से राजा अपने कोष तथा दण्ड को बढ़ाकर शत्रु पर विजय प्राप्त करता है।

मुख्य शब्द : वार्ता, मनु, सामुदायिक विकास तकनीकी, त्रिस्तरीय, पंचायती राज ।

प्रस्तावना

प्राचीन काल में समाज का उत्कर्ष मनुष्य के आर्थिक जीवन की सम्पन्नता, समुन्नति और सुख–सुविधाओं पर निर्भर करता रहा है। व्यक्ति का भौतिक और लौकिक सुख उसके जीवन के आर्थिक विकास से प्रभावित होता रहा है। यह सही है कि समय–समय पर मनुष्य के आर्थिक कार्यक्रम उसकी आवश्यकताओं के अनुरूप घटते–बढ़ते और कभी–कभी परिवर्तित भी होते रहे है। भारतीय समाज का आर्थिक विकास पुरूषार्थ के जीवन–दर्शन के माध्यम से हुआ है। जिसमें अर्थ एक प्रधान तत्व के रूप में स्वीकार किया गया है। हिन्दू धर्मशास्त्रकारों ने पुरूषार्थ के अन्तर्गत अर्थ की नियोजना की। मनुष्य की मनोवांछित सामग्री की पूर्ति अर्थ द्वारा ही होती रही है। अर्थ मनुष्य के भौतिक और लौकिक सुख को प्रदान करने वाला विशिष्ट तत्व माना गया है।

कौटिल्य और बृहस्पति जैसे प्राचीन–कालीन अनेक भारतीय शास्त्रकारों ने मनुष्य के जीवन में अर्थ की आवश्यकताओं और महत्ता प्रतिपादित की है तथा इसे संसार का मूल माना है। ऐसे लेखकों ने धर्मशास्त्र के साथ अर्थशास्त्र की भी उपादेयता स्वीकार की है।

प्राचीनकाल में कृषि और पशुधन हमारी अर्थव्यवस्था की रीढ़ थे। यही कारण है कि भारत का स्वरूप एक कृषि प्रधान राष्ट्र के रूप में उभरा। अर्थव्यवस्था के निर्धारण में कृषि ने महत्वपूर्ण भूमिका निभाई। देश में कृषि की प्रधानता रही और कृषि ही हमारी अर्थव्यवस्था की धुरी रही। तभी तो हमारे यहाँ 'उत्तमकृषि, मध्यम बान, निकृष्टचाकरी, भीख निदान' की लोकोत्ति प्रचलित हुयी। भारत में कुछ विसंगतियों के बावजूद यदि कृषि की उन्नति स्थिति बनी हुई, तो इसके पीछे भारतीय कृषि की कुछ विशेषताओं का योगदान महत्वपूर्ण है, चूंकि

कृषि भारत में प्राचीनकाल से अर्थव्यवस्था का प्रमुख आधार रही है। हमारे देश में कृषि व्यापार के साथ–साथ एक समृद्ध संस्कृति का भी विकास हुआ, जिसने भारतीय कृषि को अनेक विशेषताएँ प्रदान की। हमारी इस कृषि संस्कृति से प्रभावित होकर ही सम्भवतः कविवर मैथिली शरण गुप्त ने इन पंक्तियों का सृजन किया होगा–

बरसा रहा है रवि अनल भूतल तवा–सा जल रहा।
है चल रहा सन–सन पवन तन से पसीना ढल रहा।।
तब भी कृषक मैदान–मैदान में करते निरंतर काम है।
किस स्वार्थ के हित वे अहो लेते नहीं विश्राम हैं।।

भारतीय कृषि की सबसे बड़ी विशेषता यही है कि यह श्रम प्रधान है हमारी कृषि श्रम आधारित है। यह सच है कि इस श्रम के बेहतर परिणाम के लिये कृषक को बहुत कुछ मानसून व मौसम के मिजाज पर निर्भर रहना पड़ता है। किन्तु इसकी कोई परवाह न किये बगैर भारतीय कृषक स्वेद की साधना में डूबा रहता है। वह खेतों में अपना पसीना बहाता है, क्योंकि उसे तो देश के लिये अन्नदाता के दायित्वों का निर्वाह जो करना होता है। भारतीय कृषि की सबसे बड़ी विशेषता यही है कि भारतीय कृषक व्यापारी नहीं वह तो एक तपस्वी है, जो दिन भर तपता रहता है तथा जिसका तप इस तप से स्वेदित रहता है। भारतीय कृषक के श्रम के इस स्वेद का रहस्य यह है कि भारतीय सामाजिक जीवन में कृषि एक जीवन पद्धति है। यहाँ के कृषक को खेती–किसानी से अनुराम है, क्योंकि वह मानव समाज की उदरपूर्ति की अपनी नैतिक जिम्मेदारी को समझता है। यह सच है कि भारतीय कृषि में अनिश्चितताओं की भरमार है। सबसे बड़ी अनिश्चितता तो वर्षा की होती है। किसान टकटकी लगाये आसमान की तरफ निहारा करता है। वर्षा का रूख चाहे जैसा हो, वह अपने श्रम में किसी प्रकार की कोई कोताही नहीं बरतता है, क्योंकि उसे तो कृषि रूपी सामाजिक जीवन पद्धति के साथ तालमेल बैठाना है और जीवन निर्वाह के लिये धरती से धन निकालना ही है। इसी बात ने भारतीय कृषि व कृषक के श्रम के संस्कार दिये है, न कि बाजारवाद और व्यावसायिक अतिवाद के।

सूत्र साहित्य में बैलों को हल जोतने, बीज बोने और सीता (कूंड) को पूजने के लिये अलग–अलग धार्मिक क्रियाएँ करने का विधान है। क्षेत्र पति के लिये एक अलग यज्ञ दिया है। इन सब धार्मिक क्रियाओं से स्पष्ट है कि ई0पू0 छठी शती में भारतीयों के जीवन में कृषि का बहुत महत्व था। कौटिल्य ने पशुपालन, कृषि और व्यापार के लिये वार्ता शब्द का प्रयोग किया है और ये तीनों वैश्यों के व्यवसाय बतलाये है।

मनु के अनुसार कृषि वैश्यों का प्रमुख व्यवसाय है और पशुपालन गौण। महाभारत और रामायण में भी कृषि और पशुपालन दोनों महत्वपूर्ण व्यवसाय प्रतीत होते है।

आज भी भारत में कृषि की प्रधानता का स्वरूप कायम है और भारत की पहचान एक कृषि प्रधान देश के रूप में बनी हुयी है। सत्तर प्रतिशत देश की आबादी अभी भी गाँवों में बसती है। जिसकी जीविका का मुख्य साधन कृषि, पशुधन और कृषि से जुड़े अन्य व्यवसाय है। हमारी अर्थव्यवस्था के निर्धारण में आज भी कृषि महत्वपूर्ण भूमिका निभा रही है। भारत सरकार के आर्थिक समीक्षा के आंकड़ों से पता चलता है कि जहाँ वर्ष 1950–51 में सकल देशी उत्पाद में कृषि क्षेत्र का भाग 56.51 था वही वर्ष 2011–12 में यह घटकर 13.9 प्रतिशत ही रह गया। इसके बावजूद भारतीय अर्थव्यवस्था में कृषि की प्रभावी उपस्थिति बनी हुयी है। ऐसा अनेक कारणों से है। सबसे प्रमुख कारण यह है कि आज भी भारत की कार्यकारी जनसंख्या का एक बड़ा हिस्सा रोजगार के लिये कृषि पर निर्भर रकता है। यह भारत में जीवन निर्वाह का सबसे बड़ा माध्यम है। जिस देश की 80 प्रतिशत जनसंख्या प्रत्यक्ष या परोक्ष रूप से कृषि पर निर्भर होगी, उस देश की अर्थव्यवस्था में कृषि के महत्व को सहजता से समझा जा सकता है। आज भी भारत में कृषि कुल श्रम शक्ति के 57 प्रतिशत को रोजगार उपलब्ध करवाती है। कृषि क्षेत्र की कितनी व्यापकता है इसका पता इसी से चलता है कि यह क्षेत्र हमें न सिर्फ खाद्यान्न प्रदान करता है बल्कि रोजमर्रा की अनेकानेक वस्तुओं व वस्त्र आदि के लिये भी हम कृषि पर निर्भर करते है। इस तरह से कृषि से सिर्फ मनुष्यों को खाद्यान्न ही नहीं मिलता बल्कि पालूत पशुओं के लिये चारा आदि हमें इसी क्षेत्र से मिलता है। पशुधन से हमें दूध–घी जैसे उपयोगी पदार्थ प्राप्त होते है। इस तरह हम पाते है कि कृषि न सिर्फ देश की अर्थव्यवस्था का आधार है, बल्कि जीवन का भी आधार है। इन्हीं बातों को ध्यान में रखकर आजादी के बाद कृषि की स्थिति को उन्नत बनाने तथा किसानों की दशा सुधारने के उद्देश्य से राष्ट्रीय स्तर पर अनेक ग्रामीण योजनायें शुरू की गयी। ताकि भारतीय गाँवों का सर्वांगीण विकास हो और कृषि एव कृषक दोनों की स्थिति में सुधार आये।

आजादी के बाद सामुदायिक विकास की वरीयता देते हुये सबसे पहले वर्ष 1952 में सामुदायिक विकास योजनाओं के कार्यक्रम का शुभारम्भ किया गया। जिसे काफी महत्व भी दिया गया। इनकी शुरूवात तत्कालीन राष्ट्रपति स्व0 डा0 राजेन्द्र प्रसाद ने की थी। सामुदायिक विकास कार्यक्रमों का ढांचा इस प्रकार तैयार किया गया था कि इसमें ग्रामीणों की भागीदारी हो और यह उनका अपना कार्यक्रम बने।

राष्ट्रीय ग्रामीण योजनाओं के तहत राष्ट्रीय प्रसार सेवा की शुरूवात की गयी और इसके लिये केन्द्रीय कृषि मंत्रालय के अधीन प्रसार निदेशालय की स्थापना की गयी। प्रसार निदेशालय ने जहाँ अपने प्रकाशनों के माध्यम से कृषि के नये सुधारों और उपयोगी जानकारियों को कृषकों तक पहुँचाना शुरू किया वहीं ग्राम सेवकों से लेकर राज्य स्तर को अधिकारियों तक के लिये इस सेवा के अन्तर्गत कार्मिक प्रशिक्षण कार्यक्रम शुरू किये गये। किसानों को उन्नत कृषि तकनीकि के प्रशिक्षण कार्यक्रम शुरू किये गये है। किसानों को उन्नत कृषि तकनीकि के प्रशिक्षण की व्यवस्था की गयी, तो शैक्षणिक कार्यक्रम भी चलाये गये। इन सबका अच्छा प्रभाव सामने आया और कृषि जगत में एक नई चेतना आयी।

भारत में पंचायतों के प्राचीन स्वरूप को ध्यान में रखकर यहाँ त्रिस्तरीय पंचायतीराज प्रणाली का सूत्र पात किया गया। 24 अप्रैल, 1993 को 73 वां संविधान अधिनियम 192 प्रभावी हुआ। इसके अन्तर्गत पंचायती राज

संस्थाओं को संवैधानिक दायरे में लाया गया। कृषि की बेहतरी के लिये सरकार ने 1963 राष्ट्रीय बीज निगम की स्थापना की गयी। राष्ट्रीय बीज निगम ने उन्नत किस्म के बीजों के उत्पादन एवं वितरण पर ध्यान केन्द्रित किया। वर्ष 1965 में भारतीय खाद्य निगम की स्थापना की गयी। वही राज्य स्तर पर कृषि उद्योग निगमों की स्थापना की गयी। 1963 में राष्ट्रीय सहकारी विकास निगम की स्थापना की गयी। 15 जुलाई, 1982 को देश की कृषि एवं ग्रामीण सांख की आवश्यकताओं की पूर्ति हेतु राष्ट्रीय कृषि एवं ग्रामीण विकास बैंक (नाबार्ड) की स्थापना की गयी।

पंचवर्षीय योजनाओं का कृषि की प्रगति में योगदान–देश की आजादी के बाद भारत की प्रगति के लिये सुचितित पंचवर्षीय योजनाओं की शुरूआत की गयी। भारत की प्रथम पंचवर्षीय योजना वर्ष 1951 में शुरू की गयी थी। पंचवर्षीय योजनाओं के महत्व व संदेश को ग्रामीण क्षेत्रों में जन–जन तक पहुँचाने के उद्देश्य से वर्ष 1952 में महात्मा गाँधी के जन्मदिन 2 अक्टूबर के अवसर पर तत्कालीन राष्ट्रपति स्व0 डा0 राजेन्द्र प्रसाद द्वारा सामुदायिक विकास कार्यक्रम का शुभारम्भ किया गया भारत में कृषि विकास को ध्यान में रखते हुये पहली पंचवर्षीय योजना 1951–56 में वरीयताक्रम में कृषि को पहला स्थान दिया गया। चूँकि इस समय भारतीय कृषि में अत्यन्त निराशाजनक स्थिति थी। पहली पंचवर्षीय योजना से कृषि क्षेत्र के उनययन के लिये जो व्यापक प्रावधान किये गये उनके अच्छे परिणाम सामने आये। दूसरी पंचवर्षीय 1956–1961 में हालांकि उद्योगों को प्रधानता दी गयी, क्योंकि औद्योगिक विकास समय की जरूरत बन गया था, किन्तु कृषि की अनदेखी नहीं की गयी थी। तीसरी पंचवर्षीय योजना (1961–1966) में भी कृषि को तरजीह दी गयी और कृषि का लक्ष्य इस तरह से निर्धारित किया गया कि हम खाद्यान्न क्षेत्र में आत्मनिर्भर बनें। चौथी पंचवर्षीय योजना 1969–74 में कृषि नीतियों की पुनर्ससमीक्षा की गयी जहाँ कृषि उत्पादन में 5 प्रतिशत वार्षिक वृद्धि का लक्ष्य रखा गया। छठवी पंचवर्षीय योजना 1980–85 जो कि एक संशोधित योजना थी में कृषि विकास की दर 4 प्रतिशत रखी गयी सातवी पंचवर्षीय योजना 1985–90 में जहाँ गरीबी उन्मूलन पर ध्यान दिया गया वहीं खाद्यान्नों के उत्पादन की वार्षिक वृद्धि पर 5 प्रतिशत रखी गयी। कृषि उद्योगों को इसमें प्रोत्साहन दिया गया। आठवीं योजना (1997–2002) काफी महत्वपूर्ण थी। क्योंकि यह भारत की स्वतन्त्रता की 50 वीं वर्षगांठ के अवसर पर शुरू की गयी थी। इस योजना को मुख्य रूप से कृषि एवं ग्रामीण आय का स्तर बढ़ाने पर केन्द्रित किया गया। दसवीं पंचवर्षीय योजना 2002–2007 यद्यपि मुख्य रूप से कृषि पर केन्द्रित नहीं थी, किन्तु इसमें कृषि के विकास पर ध्यान दिया गया। इसके लिये जहाँ कृषि तकनीकों को प्रोत्साहित किया गया वहीं कृषि विज्ञानों केन्द्रों की संख्या बढ़ाने पर ध्यान दिया गया। ग्यारहवीं पंचवर्षीय योजना (2007–2012) में 4 प्रतिशत लक्ष्य कृषि संवद्धि को निर्धारित किया गया।

बारहवीं पंचवर्षीय योजना 2012–17 में कृषि क्षेत्र में ऊर्जा की अधिकाधिक आपूर्ति सुनिश्चित करने और इसके मार्ग में आने वाली बाधाओं को दूर करने पर बल दिया गया। कृषि विकास दर 4 प्रतिशत तय की गयी।

उक्त विश्लेषण से यह स्पष्ट है कि अब तक कि सभी पंचवर्षीय योजनाओं में कृषि क्षेत्र पर पर्याप्त ध्यान दिया गया और कृषि के उन्नयन के लिये विधिक प्रयास भी किये गये। इसके बावजूद कृषि जगत में जो प्रगति दिखनी चाहिये थी वह नहीं दिखी इसके पीछे कुछ कारण रहे। सबसे मुख्य कारण यह है कि हमारी पंचवर्षीय योजनायें नौकरशाही और लालफीताशाही की गिरफ्त में रही। योजनाकारों ने जो योजनायें बनाई, उन्हें ग्रामीण परिवेश और ग्रामीणों की व्यावाहरिक समस्याओं को ध्यान में रखकर नहीं बनाया गया, इसके लिये ये योजनायें उतनी प्रभावी साबित नहीं हुयी जितना उन्हें होना चाहिये था। इसके अलावा दलगत राजनीति और उठा पटक ने भी इन योजनाओं को प्रभावित किया और अच्छे परिणाम सामने नहीं आये। पंचवर्षीय योजनाओं की असफलता के लिये भ्रष्टाचार भी एक बड़ा कारण बना और भ्रष्टाचारियों की नोच–खसोट की वजह से कृषि नीतियों का सही लाभ विकास तक नहीं पहुँच पाया। केन्द्र से जो राशि विकास के लिये चली वह किसानों तक भ्रष्टाचार के कारण कुछ अंश तक ही पहुँच पायी। राजनीतिक हस्तक्षेप, अधिकारियों एवं कर्मचारियों की लापरवाही तथा पारदर्शिता के अभाव के कारण गाँव के निर्धन और कमजोर वर्गों तक इन योजनाओं का लाभ नहीं पहुँचा। अशिक्षा और जागरूकता की कमी भी आड़े आयी।

अध्ययन का उद्देश्य

मेरे शोध पत्र का उद्देश्य है कि ग्रामीण अर्थव्यवस्था में जो भी चुनौतियां हैं उनको स्वीकार करके उनमें सुधार लाया जाए कृषि में नवीन तकनीकी तथा शोध को बढ़ावा दिया जाए ताकि हमारी ग्रामीण अर्थव्यवस्था विश्व की प्रथम अर्थव्यवस्था बन जाए ।

निष्कर्ष

भारतीय कृषि का देश की अर्थव्यवस्था में महत्वपूर्ण योगदान है। ऐसे में यह आवश्यक है कि पंचवर्षीय योजनाओं में कृषि पर न सिर्फ ध्यान दिया जाये बल्कि कृषि जगत के लिये अब तक की पंचवर्षीय योजनायें बहुत सफल और लाभकारी सिद्ध क्यों नहीं हुयी। इसकी व्यापक समीक्षा भी की जाये। योजनाओं को पारदर्शी बनाया जाये तथा भ्रष्टाचार की काली छाया से तथा नौकरशाही की गिरफ्त से इन्हें मुक्त रखा जाये। सबसे जरूरी यह है कि कृषि जगत से जुड़ी समस्याओं का दूर किया जाये और इसके लिये कृषि नियोजन को योजनाओं में प्राथमिकता दी जाये। यह भी जरूरी है कि योजनाओं की निगरानी का समुचित बंदोबस्त हो, ताकि लापरवाही व भ्रष्टाचार की गुंजाइस न रहे। ऐसा करके ही हम भारतीय कृषि की काया पलट सकते है।

औद्योगीकरण, आधुनिकीकरण वैश्वीकरण का स्पष्ट प्रभाव गाँव की सामाजिक आर्थिक सांस्कृति संरचना पर देखा जा सकता है इन सबका सम्मिलित प्रभाव ग्रामीण आयोग स्तर में वृद्धि के सामने मामले में दिखता है। ग्रामीण क्षेत्रों में उपभोक्ता वस्तुओं सेवाओं की मांग लगातार बढ़ रही है। इस बढ़ती मांग ने गाँवों में रोजगार के नवीन अवसरों को भी बढ़ाया है। गाँवों का भविष्य

रोजगार की असीम सम्भावनाओं से युक्त दिख रहा है। जरूरत है इसके बेहतर तरीके से नियमन संचालित प्रबन्धन के द्वारा राष्ट्रीय अर्थव्यवस्था में ग्रामीण भागीदारी का स्तर उठाया जाये।

नई सम्भावनाओं के साथ ग्रामीण क्षेत्रों में चुनौतियों की कमी नहीं है इनसे निपटे बगैर हम ग्रामीण रोजगार सृजन और इसकी बेहतरी की कल्पना नहीं कर सकते।

सबसे बड़ी चुनौती शिक्षा व प्रशिक्षण की है हम अब भी पारम्परिक शैक्षणिक पद्धति से जुड़े है जबकि आधुनिक समय में व्यावसायिक शिक्षा की मांग जोर पकड़ रही है। आधुनिक रोजगार हेतु हमारी शिक्षा बेहतर श्रम बल तैयार नहीं कर पाती। ग्रामीण क्षेत्रों में अधिकांश लोग प्राथमिक और थोड़े बहुत लोग माध्यमिक शिक्षा प्राप्त करते है। लेकिन यह शिक्षा विशेषीकृत नहीं होती। हमारा प्रयास ग्रामीण क्षेत्रों में प्राथमिक से ही व्यवसाय केन्द्रित शिक्षण पद्धति को अपनाने के प्रति होना चाहिये। इसके अलावा अशिक्षित लोगों के लिये वैकल्पिक प्रशिक्षण की व्यवस्था की जानी चाहिये।

अंत टिप्पणी

1. *के0सी0 श्रीवास्तव–प्राचीन भारत का इतिहास तथा संस्कृति, ग्यारहवी आवृत्ति 2006–07 पृष्ठ–155*
2. *महाभारत का उद्योग पर्व 72,23,24*
3. *जयशंकर मिश्र–प्राचीन भारत का सामाजिक इतिहास षष्टम संस्करण पेज नं0 553*
4. *परीक्षा मंथन 2013 विशेषांक भाग–II पेज नं0 58*
5. *ओम प्रकाश–प्राचीन भारत का सामाजिक एवं आर्थिक इतिहास (कृषि, दुर्भिक्ष, सिंचाई बन उपवन और पशुपालन) पेज 9 चतुर्थ संस्करण।*
6. *परीक्षा मंथन 2013 विशेषांक भाग–II पेज नं0 66, 69*
7. *www.wikipedia.com*
8. *hindi : indianwaterportal.org*